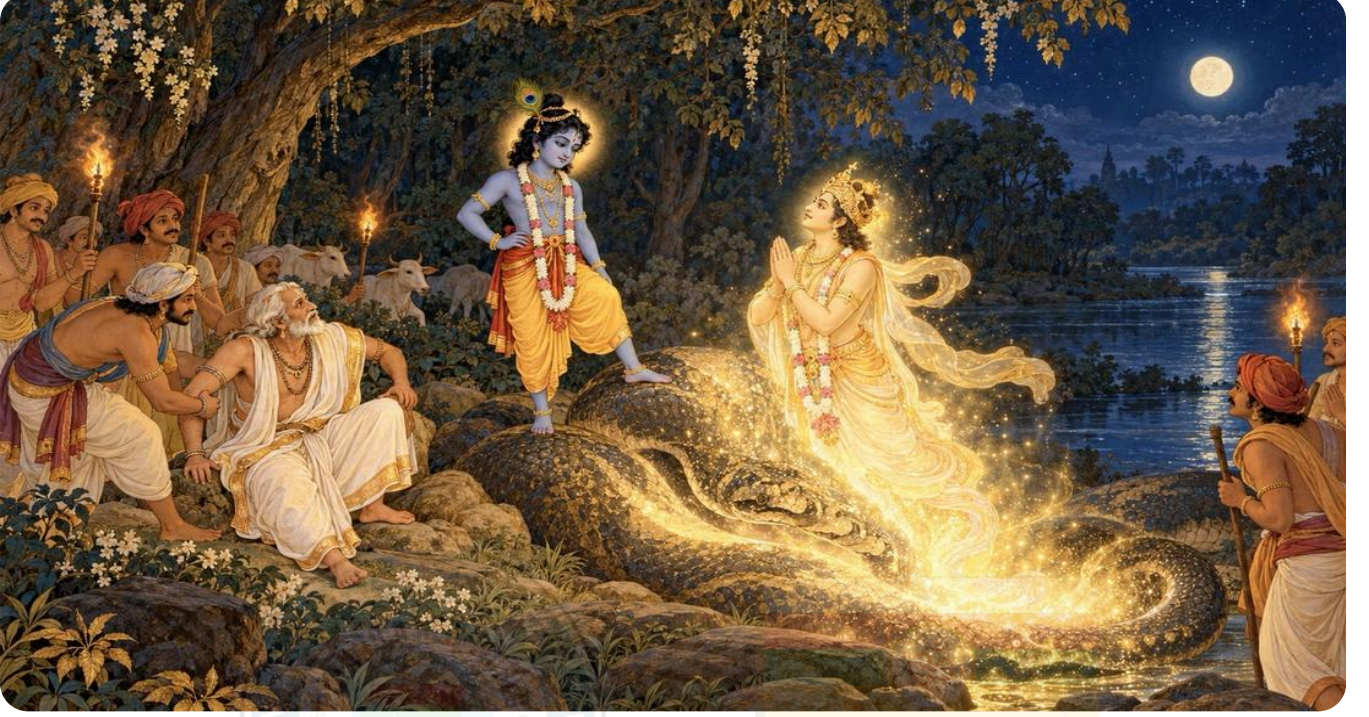


श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 34 — नन्दजी की रक्षा

5 October 2026



भगवान् के चरण का एक स्पर्श एक दीर्घ शाप को समाप्त कर देता है: जिस अजगर ने नन्दजी को जकड़ रखा था, वही एक देदीप्यमान विद्याधर बनकर उठ खड़ा होता है, और मृत्यु के मुख में पड़े एक पिता अपने जनों को लौटा दिए जाते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह चौंतीसवाँ अध्याय हमें वृन्दावन से बाहर एक तीर्थयात्रा पर ले जाता है और दो उद्धारों के साथ घर लौटा लाता है। अम्बिकावन में एक भयंकर सर्प सोते हुए नन्द महाराज को पकड़ लेता है, और उन्हीं के पुत्र का चरण पिता को मुक्त करता है तथा एक शापग्रस्त विद्याधर को सरीसृप की देह से ऊपर उठा लेता है। फिर एक चाँदनी रात में कुबेर का अनुचर व्रज की स्त्रियों को हर ले जाता है, और उनके हृदयों के आश्रय दोनों भ्राता उसे जा पकड़ते हैं। आइए, इस अध्याय का अनुसरण करें जैसे श्री शुकदेव गोस्वामी ने राजा परीक्षित को सुनाया।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)
- अध्याय: 34 (चतुस्त्रिंश अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: नन्दजी की रक्षा और शङ्खचूड़ का वध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: सरस्वती के तट पर अम्बिकावन, और रात्रि में व्रज का वन
- केंद्रीय विषय: अजगर से नन्दजी की रक्षा; भगवान् के चरण-स्पर्श से विद्याधर सुदर्शन की मुक्ति; चाँदनी वन में कृष्ण और बलराम का गान; और शङ्खचूड़ से व्रज-वनिताओं का उद्धार
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 1-32
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (संस्कृत-हिन्दी, खण्ड 2)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

पिछला अध्याय रासलीला के वर्णन को और शुकदेवजी के इस स्पष्टीकरण को पूर्ण करता है कि भगवान् की लीलाओं में उन्हें कोई दोष स्पर्श नहीं कर सकता, क्योंकि वे ही सबके अन्तर्यामी आत्मा हैं। प्रातःकाल गोपियाँ उनकी अनुमति लेकर अपने घर लौट गईं। अब कथा बाहर की ओर मुड़ती है — व्रज के गोपों द्वारा मिलकर की गई एक यात्रा की ओर।

अम्बिकावन की तीर्थयात्रा

एक दिन व्रज के गोपों के मन में किसी पवित्र स्थान पर जाकर पूजन करने की उत्कण्ठा जागी। अपनी गाड़ियों में बैलों को जोतकर वे उत्साह से अम्बिकावन की ओर चल पड़े, जो जगन्माता को प्रिय वन था। वहाँ पहुँचकर उन्होंने सरस्वती में स्नान किया और विहित पूजन-सामग्री से गहरी भक्ति के साथ भगवान् पशुपति तथा देवी अम्बिका का पूजन किया। श्रद्धापूर्वक उन्होंने ब्राह्मणों को गौएँ और स्वर्ण, वस्त्र, मिष्टान्न तथा मधु से पका अन्न अर्पित किया और सरल भाव से प्रार्थना की — ‘भगवान् हम पर प्रसन्न हों।’ फिर व्रत धारण कर और दिन भर केवल जल पर रहकर नन्द, सुनन्द तथा अन्य भाग्यशाली वृद्धजन उस रात्रि को नदी-तट पर ही लेट गए।



पवित्र यात्रा की उत्कण्ठा से ब्रज के गोप बेलगाड़ियों में अम्बिकावन पहुँचते हैं, सरस्वती में स्नान करते हैं और भक्तिपूर्वक भगवान् पशुपति तथा देवी अम्बिका का पूजन करते हैं (श्लोक 1-4)।

रात्रि में नन्दजी का पकड़ा जाना

उसी वन में, भूख से पीड़ित और विधाता की प्रेरणा से, एक विशाल सर्प आ पहुँचा। चुपचाप रेंगता हुआ वह वहाँ पहुँचा जहाँ नन्दजी सो रहे थे, और उन्हें निगलने लगा। उन कुण्डलियों की पकड़ में जागते ही ब्रज के उस सौम्य अधिपति ने न किसी शस्त्र की माँग की, न मनुष्यों से सहायता की — उन्होंने अपने पुत्र का नाम पुकारा।

स चुक्रोशाहिना ग्रस्तः कृष्ण कृष्ण महानयम् ।
सर्पो मां ग्रसते तात प्रपन्नं परिमोचय ॥ ६ ॥

sa cukrośāhinā grastaḥ kṛṣṇa kṛṣṇa mahān ayam sarpo mām grāṣate tāta prapannaṁ parimocaya

अर्थ: सर्प से ग्रसे जाने पर वे चिल्लाए, ‘कृष्ण, कृष्ण! यह महान् सर्प मुझे निगल रहा है, हे प्रिय। मुझे छोड़ा लो — मैंने तुम्हारी शरण ली है।’
(स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 6)



नदी-तट पर सोते समय विशाल सर्प की कुण्डलियों में जकड़े जाने पर नन्दजी अपने पुत्र का नाम पुकारते हैं और स्वयं को शरणागत कहते हैं (श्लोक 6)।

वह पुकार सुनते ही गोप उठ खड़े हुए। अपने प्रमुख को उन विशाल कुण्डलियों में फँसा देखकर व्याकुल होकर उन्होंने अग्नि से जलती लकड़ियाँ उठाई और उस जीव पर बार-बार प्रहार किया; किन्तु ज्वालाओं से झुलसने पर भी सर्प ने अपनी पकड़ ढीली नहीं की।

वह स्पर्श जिसने शाप समाप्त कर दिया

तब सात्वतपति भगवान् निकट आए, और बिना किसी उतावली या शस्त्र के उन्होंने सहज ही अपना चरण उस जीव पर रख दिया। उस स्पर्श से उसके समस्त अशुभ कर्मों का भार गिर पड़ा।

स वै भगवतः श्रीमत्पादस्पर्शहताशुभः ।

भेजे सर्पवपुर्हित्वा रूपं विद्याधरार्चितम् ॥ ९ ॥

sa vai bhagavataḥ śrīmat pāda-sparśa-hatāśubhaḥ bheje sarpa-vapur hitvā rūpaṁ vidyādhārārcitam

अर्थ: भगवान् के श्रीसम्पन्न चरण के स्पर्श से जिसका समस्त पाप नष्ट हो गया, उसने सर्प-शरीर त्यागकर विद्याधरों में पूजित रूप प्राप्त कर लिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 9)

अब कृष्ण के पास महान् तेज से युक्त एक पुरुष खड़ा था — स्वर्ण-हार पहने, देदीप्यमान शरीर से, विनम्र होकर प्रणाम करता हुआ। हृषीकेश ने उससे पूछा कि इतनी कान्ति और ऐसे अद्भुत रूप से शोभित तुम कौन हो, और कैसे विवश होकर इतनी घृणित योनि में डाल दिए गए थे।

सुदर्शन अपनी कथा कहते हैं

‘मैं सुदर्शन नामक एक विद्याधर हूँ,’ उसने उत्तर दिया। तेज से सम्पन्न और सौन्दर्य के लिए विख्यात वह कभी अपने विमान से आकाश की दिशाओं में विचरण करता था। अपनी सुन्दरता के मद में उसने अङ्गिरा के वंश में उत्पन्न कुछ विरूप ऋषियों पर हँसी उड़ाई थी; और अपने ही उस पाप से, जिनका उपहास उसने किया था, उन्हीं के द्वारा वह अजगर की देह में डाल दिया गया। किन्तु अब शाप के उस पार से पीछे देखते हुए उसे उसमें कृपा के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं दे रहा था।

शापो मेऽनुग्रहायैव कृतस्तैः करुणात्मभिः ।

यदहं लोकगुरुणा पदा स्पृष्टो हताशुभः ॥ १४ ॥

śāpo me 'nugrahāyaiva kṛtas taiḥ karuṇātmabhiḥ yad ahaṁ loka-guruṇā padā spr̥ṣṭo hatāśubhaḥ

अर्थ: उन करुणामय महात्माओं ने वह शाप मुझ पर केवल मेरे कल्याण के लिए ही दिया था, क्योंकि उसी के कारण अब मैं लोकगुरु के चरण से स्पर्शित हुआ और मेरा सारा पाप नष्ट हो गया। (स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 14)

यहीं इस समूची घटना का मर्म छिपा है। जब तक वह अभिमानी देवयोनि आकाश में अपने ही रूप पर मुग्ध होकर विचरती रही, तब तक उस तक कोई उपदेश नहीं पहुँच सकता था; इसलिए जो दण्ड विनाश-सा प्रतीत हुआ, वही वह मार्ग बन गया जिससे वह युगों तक रेंगता हुआ उसी एक वन तक पहुँचाया गया जहाँ भगवान् का चरण उस पर पड़ने वाला था। शाप देने वाले ऋषि इसीलिए करुणात्मा कहे गए हैं कि उनकी कठोरता ने उस गर्व को रिक्त कर दिया जो उसे कृपा से दूर रखे हुए था। उस रात भगवान् ने केवल नन्दजी को ही नहीं बचाया; उन्होंने एक भूख, एक यात्रा और एक शयन-स्थल की ऐसी रचना की कि सरीसृप-देह में चिरकाल से डूबी एक आत्मा उसी क्षण मुक्त हो जाए। भगवान् के व्यवहार में कुछ भी आकस्मिक नहीं है, और जो हमें उनके चरणों तक ले आए वह अन्ततः दुर्भाग्य नहीं होता।

अब मुक्त होकर सुदर्शन ने विदा माँगी, कृष्ण को शोकनाशक, महायोगी, पुरुषोत्तम और सन्तों के रक्षक कहकर पुकारा, जिनमें जन्म-मरण से भयभीत जन शरण पाते हैं। और फिर उसने वह विस्मय कहा जो उसके भीतर सबसे ऊपर था।

ब्रह्मदण्डाद्विमुक्तोऽहं सद्यस्तेऽच्युत दर्शनात् ।

यन्नाम गृह्णन्नखिलान् श्रोतृनात्मानमेव च ।

सद्यः पुनाति किं भूयस्तस्य स्पृष्टः पदा हि ते ॥ १७ ॥

brahma-daṇḍād vimukto 'haṁ sadyas te 'cyuta darśanāt yan-nāma gṛhṇann akhilān śrotṛn ātmānam eva ca sadyaḥ punāti kiṁ bhūyas tasya spr̥ṣṭaḥ padā hi te

अर्थ: हे अच्युत, आपके दर्शनमात्र से मैं उसी क्षण ब्राह्मणों के दण्ड से मुक्त हो गया। जो आपका नाम उच्चारण करता है वह तत्काल स्वयं को और सुनने वाले सबको पवित्र कर देता है — फिर जो साक्षात् आपके चरण से स्पर्शित हुआ हो, उसकी तो बात ही क्या! (स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 17)

विदा लेकर सुदर्शन ने भगवान् की श्रद्धापूर्वक परिक्रमा की, प्रणाम किया और स्वर्गलोक को चले गए; और नन्दजी उस प्राणसंकट से छुड़ा लिए गए। कृष्ण के इस अनुपम ऐश्वर्य को देखकर विस्मित चित्त ब्रजवासियों ने अपने अनुष्ठान पूरे किए और उस तीर्थ से घर लौटे, मार्ग भर श्रद्धा से उसी की चर्चा करते हुए।

दोनों भाइयों का गान

कुछ काल पश्चात्, वन में एक रात्रि को, गोपालक कृष्ण और अद्भुत पराक्रमी बलराम ब्रज की स्त्रियों के बीच विहार कर रहे थे। जिनका प्रेम उन दोनों पर टिका था, वे स्त्रियाँ आभूषणों से सजी थीं, उनके अङ्ग चन्दन से सुगन्धित थे, और वे मालाएँ तथा निर्मल वस्त्र पहने मधुर स्वर में दोनों भाइयों का गुणगान कर रही थीं। रात्रि स्वयं मानो उनका स्वागत कर रही थी: चन्द्रमा तारों सहित उदित था, चमेली की गन्ध से मतवाले भ्रमर मँडरा रहे थे, और कुमुदिनियों की सुगन्ध लिए पवन बह रही थी। ऐसी रात्रि का सम्मान करते हुए दोनों ने साथ-साथ गाया, स्वरों के पूरे क्रम में नियमित आरोह-अवरोह के साथ, और समस्त प्राणियों के मन तथा कान आनन्द से भर उठे। उस गान को सुनकर गोपियाँ ऐसी तन्मयता में डूब गई कि उन्हें अपने वस्त्रों का खिसकना और वेणी से मालाओं का गिरना भी ज्ञात न हुआ।



चमेली और कुमुदिनी की सुगन्ध से भरी चाँदनी रात में कृष्ण और बलराम स्वरों के पूरे क्रम में गाते हैं और हर प्राणी को आनन्दित कर देते हैं (श्लोक 20-24)।

शङ्खचूड़ ब्रज की स्त्रियों को हर ले जाता है

जब दोनों भाई इस प्रकार निर्बाध विहार और गान कर रहे थे, तभी धन के दाता कुबेर का एक अनुचर, जिसका नाम शङ्खचूड़ था, वहाँ आ पहुँचा। निर्भय होकर उसने उन दोनों के देखते-देखते उन भयभीत स्त्रियों को, जो उन्हीं के संरक्षण में थीं, उत्तर दिशा की ओर हाँक दिया। अपनी ही स्त्रियों को 'हे कृष्ण! हे बलराम!' पुकारते हुए — मानो डाकू द्वारा हरी गई गौएँ हों — देखकर दोनों भाई उसके पीछे दौड़े।



'हे कृष्ण! हे बलराम!' पुकारती ब्रज की स्त्रियाँ दोनों वेगवान् भाइयों की ओर लौटती हैं, जो 'मत डरो' कहते हुए भागते शङ्खचूड़ को जा पकड़ते हैं (श्लोक 26-29)।

मा भैष्टेत्यभयारावौ शालहस्तौ तरस्विनौ ।

आसेदतुस्तं तरसा त्वरितं गुह्यकाधमम् ॥ २८ ॥

mā bhaiṣṭety abhayārāvau śāla-hastau tarasvinau āsedatus taṁ tarasā tvaritaṁ guhyakādhamaṁ

अर्थ: 'मत डरो!' यह अभयवाणी कहते हुए, हाथ में एक-एक साल वृक्ष लिए वे दोनों वेगवान् भाई तेज़ी से उस अधम गुह्यक तक जा पहुँचे। (स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 28)

उन दोनों को काल और मृत्यु के समान अपने पीछे आते देखकर वह मूढ़ यक्ष काँप उठा, स्त्रियों को छोड़कर अपने प्राण बचाने के लिए सिर पर पाँव रखकर भागा।

चूड़ामणि बलराम को अर्पित

कृष्ण उसके सिर पर जड़ी मणि लेने के संकल्प से, वह जहाँ-जहाँ भागा वहाँ-वहाँ उसके पीछे दौड़े, और बलराम स्त्रियों की रक्षा में खड़े रहे। मानो वह कभी दूर था ही नहीं, इस प्रकार उसके निकट पहुँचकर सर्वशक्तिमान् प्रभु ने एक ही मुष्टि-प्रहार से उस दुरात्मा का सिर चूड़ामणि सहित ले लिया। फिर वे हाथ में उस देदीप्यमान मणि को लिए वन की ओर लौटे।

शङ्खचूडं निहत्यैवं मणिमादाय भास्वरम् ।

अग्रजायाददात्प्रीत्या पश्यन्तीनां च योषिताम् ॥ ३२ ॥

śaṅkhacūḍaṁ nihatyaivaṁ maṇim ādāya bhāsvaram agrajāyādadāt prītyā paśyantīnāṁ ca yoṣitām

अर्थ: इस प्रकार शङ्खचूड़ का वध कर और उसकी उज्ज्वल मणि लेकर भगवान् ने उसे प्रेमपूर्वक अपने बड़े भाई को अर्पित कर दिया, और स्त्रियाँ यह देखती रह गईं। (स्कन्ध 10, अध्याय 34, श्लोक 32)



उज्ज्वल मणि लेकर लौटते हुए कृष्ण उसे प्रेमपूर्वक अपने बड़े भाई के हाथों में रख देते हैं, और व्रज की स्त्रियाँ यह देखती रह जाती हैं (श्लोक 32)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवन्नाम भक्त के हृदय की प्रथम पुकार है। सर्प की पकड़ में नन्दजी सहायता की ओर हाथ नहीं बढ़ाते, अपितु अपने पुत्र का नाम लेकर स्वयं को शरणागत घोषित करते हैं (श्लोक 6)। सबसे असहाय क्षण में जीव जो कहता है, वही बताता है कि वह वास्तव में कहाँ बसता है।
2. करुणावानों का दण्ड छिपा हुआ अनुग्रह है। सुदर्शन उन्हीं ऋषियों को *करुणात्मभिः* कहते हैं जिन्होंने उन्हें शाप दिया (श्लोक 14), क्योंकि उस दण्ड ने वह अहंकार उतार दिया जिसे कोई मधुर उपदेश न हटा पाता।
3. भगवान् का नाम, दर्शन और स्पर्श अपार पावन करते हैं। उनका नाम सुनना भी कहने और सुनने वाले दोनों को तत्क्षण शुद्ध कर देता है (श्लोक 17)। विद्याधर का युगों लम्बा बन्धन एक चरण-स्पर्श के भीतर समाप्त हो जाता है।
4. रक्षा उन्हीं की होती है जो उन्हें पुकारते हैं। ‘मत डरो’ — यह स्वयं भगवान् का वचन है भयभीतों के लिए (श्लोक 28)। वे दूर से केवल दया नहीं करते; वे संकट के पीछे तब तक दौड़ते हैं जब तक उसे जा न पकड़ें।
5. भगवान् अपने जनों को सम्मानित करने में आनन्द पाते हैं। स्वयं जीती हुई उज्ज्वल मणि को कृष्ण तत्काल प्रेमवश बलराम के हाथों में रख देते हैं (श्लोक 32)। जो वे पाते हैं, वह अपने प्रियजनों को दे देते हैं।

एक भाक्तेमय चिन्तन

इस अध्याय में दो उद्धार हैं, और दोनों एक पुकार से आरम्भ होते हैं। नन्दजी अन्धकार में पुकारते हैं और कुण्डलियों से मुक्त हो जाते हैं; व्रज की स्त्रियाँ वन में पुकारती हैं और जा पकड़ी जाकर सुरक्षित लौटा दी जाती हैं। इन दोनों के बीच एक तीसरा खड़ा है जिसके उद्धार का विचार किसी के मन में था ही नहीं — स्वयं वह सर्प, जिसे सब जलती लकड़ियों से पीट रहे थे। गोपों को केवल एक राक्षसी जन्तु दिखा जो उनके प्रमुख को निगल रहा था; कृष्ण ने एक विद्याधर देखा जो अपनी लम्बी सज़ा काट रहा था, और एक ही चेष्टा से दोनों को मुक्त कर दिया। कितनी बार जिससे हम सबसे अधिक लड़ते हैं वह कोई संकटग्रस्त आत्मा ही होती है, और अपने चारों ओर के जीवन में मुड़ी हुई कथाओं को हम कितना कम जानते हैं। यहाँ हमारे अपने अँधेरे दिनों के लिए भी आश्वासन है। रेंगते हुए सुदर्शन अपने शाप को नहीं समझ पाया; वह तभी समझा जब भगवान् का चरण उतरा और उसके कष्ट का समूचा आकार एक मार्ग सिद्ध हुआ। किन्तु यह अध्याय चुपचाप वचन देता है कि जिन्होंने एक शापित जीव को मुक्त करने के लिए एक तीर्थयात्रा, एक भूख और सरस्वती-तट की एक रात्रि रच दी, वे हमारी भी विस्मृति नहीं करते।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज भगवन्नाम को इतना निकट रखिए कि वही आपका पहला स्वर बने। जब कोई बात चौंका दे या डरा दे — बुरा समाचार, अकस्मात् कोई हानि, रात में जगा देने वाला कोई भय — तब चिन्ता से पहले ‘कृष्ण, कृष्ण’ आए, जैसे सर्प की पकड़ में नन्दजी के मुख से आया। जब-जब स्मरण आए, उसे एक बार बोलकर कहिए ताकि कोई और भी सुन ले, इस अध्याय के इस आश्वासन पर भरोसा करते हुए कि उनका नाम कहने वाले और सुनने वाले — दोनों को पवित्र करता है। अभी धीरे से आरम्भ कीजिए: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

यह अध्याय दो उद्धारों को आमने-सामने रखकर दोनों में एक ही करुणा का कार्य दिखाता है। अम्बिकावन में एक पिता की असहाय पुकार का उत्तर वह पुत्र देता है जिसका चरण समस्त बन्धन का अन्त है, और जिस सर्प ने उन्हें जकड़ा था वह मुक्त विद्याधर बनकर चला जाता है। चाँदनी वन में एक चोर उन्हें हर ले जाता है जिन्होंने अपने हृदय दोनों भाइयों को सौंप दिए हैं, और भय के जमने से पहले ही वह जा पकड़ा जाता है। आदि से अन्त तक भगवान् शरणागतों के आश्रय रूप में दिखाए गए हैं — एक ऐसे शापित जीव तक झुकते हुए जिस पर किसी को दया न आई, और उन भयभीत स्त्रियों के पीछे दौड़ते हुए जिन्हें कोई और न बचा सकता था। हम नन्दजी से यह सीखें कि सबसे पहले उनका नाम पुकारें, और सुदर्शन से यह कि जो हमें घायल करता है वही हाथ हमें उनके चरणों तक पहुँचाने वाला हो सकता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (संस्कृत-हिन्दी, खण्ड 2), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), चतुस्त्रिंश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।

- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-34-nanda-saved-and-sankhachuda-slain-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

